पू. श्री कानजी स्वामी का ७५ वीं जन्मोत्सव प्रसंग पर "कानजी स्वामि-हीरक जयन्ती अभिनन्दन ग्रंथ" (पृ. १४१-१४३) में से श्री लालचन्द अमरचन्दजी मोदी, राजकोट का लेख:-

निमित्त-नैमित्तक सम्बन्ध

आत्माका परपदार्थ के साथ भले ही कर्ता-कर्म सम्बन्ध न हो, परन्तु निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध तो है न ? ऐसा प्रश्न भी उत्पन्न होता है ।

व्याप्य-व्यापकभावसे आत्मा परपदार्थका कर्ता हो तो तन्मयपनेका प्रसंग आता है और जो निमित्त-नैमित्तिकभावसे परपदार्थका कर्ता बने तो नित्यकर्तृत्वका दोष आता है, इसलिए निमित्तकर्ता भी नहीं है।

आत्मा जब स्वयं ज्ञातास्वभावसे च्युत होता है तब रागादि विकारभावरूप परिणमता है। उस समय उस नैमित्तिकरूप रागको स्वस्वभावका आश्रय नहीं है, किन्तु कर्म आदि परपदार्थका आश्रय होता है। इसलिए जिसके आश्रयसे-लक्ष्यसे विकार होता है उस पदार्थको निमित्त कहनेमें आता है । (प्रत्येक परपदार्थमें स्वभाबसे तो ज्ञेयपना है।) रागादि विकार स्वभावको भूलनेसे उत्पन्न होता है ऐसा न मानकर कर्मके उदयसे विकार होता है ऐसा माननेवाला निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्धको भी जानता नहीं, इसलिए उसे आस्रव-बन्धका भी यथार्थ ज्ञान हो सकता नहीं ।

रागादि बिकारकी उत्पत्ति कैसे होती है इसकी ही जिसे खबर नहीं है उसे उसकी उत्पत्ति कैसे नहीं होती इसकी स्वबर कहाँसे हो सकती है। इसलिए सर्व प्रथम रागकी उत्पत्तिका यथार्थ कारण क्या है उसे जाननेके लिए एक दृष्टान्त देते हैं-

बम्बई नगरीमें एक धनाढ्य कुटुम्ब रहता था । उस सेठका पुत्र परदेशमें व्यापार करता था । जिस शहरमें व्यापार करता था, उसी शहर में उसके पिताका मित्र भी रहता था । उसने एकबार बम्बईमें रहनेवाले अपने मित्र सेठके नाम पत्र लिखा कि मुझे पचास हजार रुपयोंकी आवश्यकता है सो आप मेरे पास जो जवाहरात और गहने है उन्हें गिरवी रखकर रुपया देनेके लिए यहाँ रहनेवाले अपने पुत्रको पत्र लिखनेकी कृपा करना, जिससे बह रकम मुझे यहाँसे मिल जाय ।

उक्त पत्र बम्बईके सेठके पास आनेपर सेठने परदेशमें रहनेवाले अपने पुत्रको लिखा कि मेरा एक मित्र सेठ ..... वहाँ रहता है। उसे काम चलानेके लिए रुपयोंकी आवश्यकता है । सो उसके पाससे जबाहरात और गहने गिरवी रखकर उसके पेटे पचास हजार रुपया ब्याज पर दे देना ।

पिताजीकी तरफसे आये हुए इस पत्रको पुत्रने उतावलीसे पढ़ा। कारण कि उसका सिनेमा देखनेके लिए जानेका समय हो गया था । इसलिए उसने उतावलीमें पत्रका पूर्वार्ध न पढ़कर मात्र

उत्तरार्ध पढ़ा और गहने गिरवी रखे बिना पचास हजार रुपया दे दिये। कारण कि रुपया दे देनेके लिए उत्तरार्धमें लिखा था। परन्तु 'गहने गिरवी रखकर देना' पूर्वार्धका यह अंश पढ़ा नहीं था ।

इसके बाद छह महीना हुए होंगे कि वह आर्थिक दृष्टिसे कमजोर पड़ गया, उसकी पीढ़ी भी बन्द हो गई । तब रुपया देनेवाले सेठके पुत्रको खबर लगी कि पिताजीका मित्र तो कमजोर हो गया और अपना रुपया गया। यह खबर मिलते ही उसने बम्बई अपने पिताको पत्र लिखा कि आपके लिखनेसे जिसे पचास हजार रुपया दिया था वह आपका मित्र आर्थिक दृष्टिसे कमजोर हो गया है और अपना रुपया भी जोखममें आ गया है, कदाचित् बट्टेखाते डालना पड़े ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है; इसलिए अब क्या करना ? इस मतलबका पत्र बम्बईके सेठको मिला । पत्रके मिलने पर पढ़कर उसने विचार किया कि भाई ऐसा कैसे लिखता है। मैंने तो जवाहरात और गहने गिरवी रखकर उसे रुपया देनेको लिखा था । सेठजीने तत्काल परदेश अपने पुत्रको पत्र लिखा कि मेरा पहला पत्र पढ़ो । उसमें मैंने यह वाक्य लिखा है- "जवाहरात और गहने गिरवी रखकर उसके पेटे मेरे मित्रको पचास हजार रुपया देना।" तब पुत्रने उक्त वाक्यवाला पत्र फायलमेंसे निकाल कर पढ़ा । पत्रके पढ़ते ही तत्काल अपनी भूल दिखाई दी कि उतावलोमें पत्र अधूरा पढ़ा था । अल्प विराम तकका पूर्वार्ध पढ़ा नहीं और उत्तरार्धका अधूरा वाक्य पढ़ा। पढ़नेमें भूल हो गई, इससे ऐसा हो गया। जो बराबर पूरा वाक्य पढ़ा होता तो ऐसा नहीं होता ।

यह उदाहरण है। इस परसे जो सिद्धान्त फलित होता है वह इस प्रकार है-

सर्वज्ञ वीतराग परमात्माकी वाणीमें ऐसा आया है कि जब जीव अपने ज्ञायक स्वभावको भूलता है- स्वभावसे च्युत होता है तभी वह रागादि विकाररूपसे परिणमता है। उस समय उसका लक्ष्य जिस परपदार्थके ऊपर होता है उसे निमित्त कहा जाता है और रागादिकको नैमित्तिक कहा जाता है।

तथापि अज्ञानी जीव भगवानकी वाणीके 'स्वभावको भूलनेसे राग होता है' इस पूर्वार्धको न पढ़कर 'कर्मके उदयसे राग होता है' ऐसा मानकर एकान्त कर्मके ऊपर रागके कर्तापनेका दोष मढ़ता है। किन्तु भगवानकी वाणीमें आया हुआ कर्मके उदयसे राग होता है' यह उत्तरार्थ कथन व्यवहारनयका वचन है। तथापि अज्ञानी जीव एकान्तसे व्यवहारनयके कथनको ग्रहणकर अशुद्ध उपादानरूप निश्चयनयके कथनको छोड़ देता है ।

उपादानका कथन यथार्थ है और यथार्थका नाम निश्चय है। निमित्तप्रधान कथन उपचार है और उपचारका नाम व्यवहार है ।

इसलिए कर्म-निमित्तके पक्षपाती जीव श्री समयसारजी शास्त्रकी गाथा ३७८-३७९ का आधार देकर कहते हैं कि देखो, इसमें लिखा है कि "जो परद्रव्य आत्माके रागादिका निमित्त है उसी परद्रव्यके द्वारा ही शुद्ध स्वभावसे च्युत होता हुआ रागादिरूपसे परिणमाया जाता है।" यद्यपि पूर्वोक्त शास्त्रवचनमै सुस्पष्ट शब्दोंमें कहा है कि "शुद्ध स्वभावसे च्युत होता हुआ ही" सो इसका तात्पर्य यह है कि जब आत्मा स्वतन्त्रपने स्वयं शुद्ध स्वभावसे च्युत होता है तभी परद्रव्य द्वारा रागादिरूपसे परिणमाया जाता है। इसलिए इस गाथा वचनसे ही ऐसा सिद्ध होता है कि जब जीव स्वयं शुद्ध स्वभावसे च्युत होकर रागादि नैमित्तिक भावरूपसे परिणमता है उस समय रागका जो लक्ष्य होता है

ऐसे परद्रव्य पर रागके निमित्त कर्तापनेका आरोप आत्ता है। इससे यह फलित हुआ कि कर्मके उदयसे राग होता नहीं, परन्तु जब जीव स्वयं शुद्ध स्वभावसे च्युत होता है तब राग होता है।

आत्माका खभावदृष्टिसे परपदार्थके साथ निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्धका अभाव होते हुए जो स्वभावको भूला है उसीको एक समय पुरता निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध होता है, अतः आस्रव-बन्ध होता है। और उस आस्रव-वन्धरूप निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्धका निरोध-अभाव होते ही संवर, निर्जरा, मोक्ष उत्पन्न होता है ।

इसलिए आत्मा को स्वभावदृष्टिसे देखने पर निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध नहीं है। परन्तु स्वयंको जानते हुए अपने में ज्ञाता-ज्ञेय ऐसा सम्बन्ध चालू रहते हुए पर पदार्थोंके साथ भी ज्ञाता-ज्ञेयपना घटित होता है। स्व-परप्रकाशक स्वभाव में कर्ता-कर्म या निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध नहीं है ।

श्री लालचन्द अमरचन्दजी मोदी, राजकोट
वीर सं. २४९०, वैशाख सूद २
13 May 1964